IJRAR.ORG E-ISSN: 2348-1269, P-ISSN: 2349-5138

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH AND ANALYTICAL REVIEWS (IJRAR) | IJRAR.ORG

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

सामाजिक समरसता में गुरबाणी संगीत की भूमिका

By
Dr Jasmeet kour
Associate Prof
GDC R S PURA
J&k

सारांश

भारतीय संगीत की प्रत्येक धारा आध्यात्मिकता के साथ निरंतर विकसित होती रही है। दोनों का संबंध इतना गहरा है कि एक को दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। भारत की विभिन्न संस्कृतियों तथा उनमें विकसित परंपराओं का मूल आधार आध्यात्मिकता रहा है। मध्यकालीन युग में सिख गुरुओं की वाणी सामने आई, जिसे "गुरबाणी" के नाम से जाना जाता है। दार्शनिक दृष्टि से यह साहित्य विद्वानों द्वारा रचित ऐसी रचनाओं का संग्रह है, जिसमें उस समय की परिस्थितियों का वर्णन करते हुए मानव जीवन को सफल बनाने का मार्ग प्रस्तुत किया गया है।

गुरबाणी ने संगीत के माध्यम से समाज में फैली बुराइयों और अज्ञानता को दूर करने का प्रयास किया। संगीत एक ऐसा माध्यम है जो एक साथ अनेक लोगों तक आसानी से पहुँच सकता है। इसी के माध्यम से गुरुओं और भक्तों के अमूल्य उपदेश जनसामान्य तक पहुँचे।

मुख्य शब्द (Keywords):
गुरबाणी, रचनाएँ, आध्यात्मिक संगीत, संस्कृतियाँ, सिख संगीत।

परिचय

"गुरबाणी" शब्द दो शब्दों – "गुरु" और "बाणी" – से मिलकर बना है। "गुरु" या "गुर" का अर्थ है वह जो शिक्षा देता है अथवा सही मार्ग दिखाता है। "बाणी" से अभिप्राय गुरुओं द्वारा बोले गए उन शब्दों से है, जो गद्य या पद्य के रूप में होते हैं और संसार को सही मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं। ऐसे लिखित अथवा बोले गए शब्दों को "गुरबाणी" कहा जाता है।

संगीत संगीत मूलतः **गायन, वादन और नृत्य** का समन्वय है। इसका निर्माण **लय** और **स्वर** से होता है, जो संगीत रूपी रथ के दो पहिए हैं। यह सर्वविदित है कि भारतीय संगीत का जन्म वेदों अथवा वैदिक युग में हुआ। हमारे ऋषि-मुनियों ने सर्वप्रथम **सामगान** का विकास किया, जिसने आगे चलकर भारतीय संगीत के विकास का मार्ग प्रशस्त किया।

वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार –
"यदि वैदिक सामगान को भारतीय संगीत के विकास का प्रथम युग माना जाए, तो गंधर्व उपवेद को संगीत विकास का द्वितीय युग माना जाना चाहिए।

1. *निबंध संगीत लेख – भारतीय संगीत की प्राचीन परंपरा*
   पृष्ठ : 163 – वासुदेव शरण अग्रवाल

भारतीय संगीत और आध्यात्मिकता विकास के प्रत्येक युग तथा प्रत्येक चरण में एक-दूसरे से गहराई से जुड़े रहे हैं। ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा और समर्पण की भावना ही भक्ति कहलाती है। भारत की विभिन्न संस्कृतियों तथा उनमें विकसित परंपराओं का मूल आधार आध्यात्मिकता रहा है।

भारत की धरती धर्म की भूमि रही है। इसकी विचारधारा सदैव लोककल्याण और आदर्शों पर आधारित रही है। यहाँ की प्रत्येक धूल-कण में **राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, गुरु नानक** आदि महान आत्माओं की चेतना समाहित है। उत्तर भारत के अधिकांश राज्य समृद्ध थे, किंतु विदेशी आक्रमणों का सबसे अधिक प्रभाव भी इसी क्षेत्र पर पड़ा, जिसने यहाँ के जनजीवन को अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक प्रभावित किया।

गुरबाणी का इतिहास

मध्यकालीन युग अत्याचार और अज्ञानता का काल था। मानवता अंधकार, पाप और अपराधों के जाल में फँसकर मानो पशुवत जीवन जीने लगी थी। राज्य और समाज दोनों में अन्याय तथा अत्याचार बढ़ रहे थे। जब धर्म और सदाचार पर आक्रमण होने लगे तथा बुराइयाँ फैलने लगीं, तब जनजीवन अत्यंत दयनीय स्थिति में पहुँच गया।

मुगल काल (1521 ई. से 1707 ई.) पंजाबी संगीत और साहित्य के इतिहास में अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। इसी कारण इसे पंजाबी संगीत और साहित्य का स्वर्ण युग भी कहा जाता है। इस युग का संगीत और साहित्य अपनी उत्कृष्टता, व्यापकता और जनहितकारी स्वरूप के लिए प्रसिद्ध है।

सिख गुरुओं – **गुरु नानक देव जी, गुरु अर्जुन देव जी, गुरु रामदास जी, गुरु अमरदास जी, गुरु गोबिंद सिंह जी** तथा **भाई गुरदास जी** – इस युग की अद्वितीय रचनाएँ है।

अपनी रूपकात्मक परिपक्वता तथा जागृति के स्वरूप के आधार पर इस काल को अन्य कालों से अलग माना जाता है। कीर्तन और सत्संग की परंपरा ने आध्यात्मिक साहित्य को समाज के व्यापक क्षेत्र तक पहुँचाया। इस युग में सिख गुरुओं द्वारा रचित वाणी को सर्वश्रेष्ठ रचनात्मक अभिव्यक्ति माना गया।

इसी काल में सिख गुरुओं की वाणी "गुरु ग्रंथ साहिब" के रूप में प्रकट हुई। दार्शनिक दृष्टि से यह साहित्य विद्वानों द्वारा रचित अमूल्य वाणी है, जिसमें तत्कालीन परिस्थितियों का सार प्रस्तुत करते हुए मानव जीवन को सफल बनाने का मार्ग दिखाया गया। सिख गुरुओं का साहित्यिक योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण और सम्माननीय है। गुरुओं ने सामाजिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों को संगठित कर तत्कालीन शासकों के अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाई। लगभग दो शताब्दियों तक गुरबाणी संगीत और सामाजिक सभाओं के माध्यम से लोगों की चेतना को जागृत किया गया।

गुरबाणी के विषय में

सिख समुदाय का धर्मग्रंथ "श्री गुरु ग्रंथ साहिब" है। गुरुओं की महिमा में विश्वास रखना तथा उनके उपदेशों और वचनों को ही मुक्ति का मार्ग मानना सिख धर्म का मूल आधार है। सिख धर्म में कर्मकांड को अधिक महत्व नहीं दिया गया है, बल्कि गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित वाणी को ही सर्वोच्च माना गया है। गुरु नानक देव जी तथा अन्य दस गुरुओं की इसी विचारधारा को "गुरबाणी" कहा जाता है।

गुरु ग्रंथ साहिब को सिखों का प्रथम लिखित धर्मग्रंथ माना जाता है, इसलिए इसे "आदि ग्रंथ" भी कहा जाता है। सत्रहवीं शताब्दी के प्रारंभ में पाँचवें गुरु, गुरु अर्जुन देव जी ने गुरु ग्रंथ साहिब के संकलन का कार्य आरंभ किया। उन्होंने अपनी वाणी के साथ-साथ पूर्ववर्ती गुरुओं की वाणी को भी संकलित किया। अंततः 1601 ईस्वी में अमृतसर स्थित रामसर के शांत वातावरण में भाई गुरदास जी के हाथों "श्री गुरु ग्रंथ साहिब" का लेखन प्रारंभ कराया गया। 1604 ईस्वी में ग्रंथ साहिब के पूर्ण होने पर इसे हरमंदिर साहिब (अमृतसर) में स्थापित किया गया।

गुरु अर्जुन देव जी ने गुरबाणी को अत्यंत व्यवस्थित रूप में गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित किया। धार्मिक और सामाजिक उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए यह विशेष साहित्यिक संरचना वाला प्रथम महान ग्रंथ माना जाता है।

मध्यकालीन समय में पंजाब की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। लोगों को अनेक प्रकार के अत्याचारों और अन्यायों का सामना करना पड़ता था। उस समय के अंधकारमय वातावरण और परिस्थितियों को देखते हुए ऐसे महान गुरु की आवश्यकता थी, जो अपने प्रकाश से अज्ञानता के अंधकार को दूर कर सके, जैसे अमावस्या के अंधकार को चंद्रमा दूर करता है। ऐसी परिस्थिति में गुरु नानक देव जी ने सभी धर्मों का चिंतन करते हुए "गुरबाणी" के रूप में एक नई दिशा प्रदान की।

गुरबाणी की प्रस्तुति में गुरु जी ने स्वयं को एक स्त्री स्वरूप में प्रस्तुत किया तथा "खसम की वाणी" को "खसम की ताड़ी" के रूप में व्यक्त किया। उन्होंने स्वयं को एक कवि (शायर) के रूप में प्रस्तुत करते हुए इस वाणी को मानव आत्मा की पुकार बनाया।

सम्पूर्ण गुरबाणी रागों पर आधारित है। इसमें कुल 31 मुख्य राग हैं तथा इनके अनेक उपराग भी हैं। गुरुओं का विश्वास था कि राग मन को एकाग्र करते हैं और व्यक्ति के मन पर गहरा प्रभाव डालते हैं। जिस प्रकार भाषा के माध्यम से विचार व्यक्त किए जाते हैं, उसी प्रकार रागों के माध्यम से मन की आंतरिक भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है। गुरुओं का मानना था कि केवल मनोरंजन के लिए प्रयुक्त संगीत अज्ञानता को बढ़ा सकता है, जबकि रागों का अभ्यास मन के विकारों को दूर कर उसे शुद्ध बनाता है तथा मनुष्य को परमात्मा से जोड़ता है। इसी माध्यम से एक श्रेष्ठ समाज की रचना संभव है।

गुरबाणी में रचित "जपुजी साहिब" को गुरबाणी की कुंजी माना जाता है। इससे गुरु जी की साहित्यिक प्रतिभा का परिचय मिलता है, जिसमें सभी धर्मों के प्रति सम्मान और समानता का संदेश दिया गया है।

गुरुओं ने गुरबाणी संगीत के माध्यम से समाज में फैली बुराइयों की निंदा की और लोगों को उनके प्रति जागरूक किया। उन्होंने बाहरी आडंबर और दिखावे का भी विरोध किया। गुरुओं ने गृहस्थ जीवन जीते हुए भी मनुष्य को जातिवाद, छुआछूत आदि बुराइयों से दूर रहने की शिक्षा दी। अनेक उदाहरणों के माध्यम से उन्होंने समाज को मानवता, समानता और भाईचारे का संदेश दिया तथा गुरबाणी के द्वारा सत्य का दर्पण दिखाया।

गुरुओं ने सती प्रथा का भी विरोध किया और यह स्पष्ट किया कि स्त्री और पुरुष दोनों समान हैं। गुरबाणी संगीत में विभिन्न धर्मों के संतों की वाणियों को भी संकलित किया गया है।

समाज में शूद्रों (निम्न जाति) की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। उन्हें अंधेरे में अपने गले में घंटी बाँधकर चलना पड़ता था ताकि ऊँची जातियों के लोग उनकी छाया से भी दूर रह सकें। उन्हें मंदिरों में प्रवेश की अनुमति भी नहीं थी।

मध्यकालीन समाज में मध्य वर्ग पर थोपे गए कर्मकांड और रीति-रिवाज अत्यंत कठोर थे, जिससे लोग अत्यधिक परेशान हो चुके थे। जन्म से लेकर मृत्यु तक लगभग चालीस प्रकार के संस्कारों और रस्मों का पालन करना अनिवार्य माना जाता था। गरीब तथा निम्न वर्ग के लोग इन्हीं परंपराओं के बोझ तले जीवन व्यतीत कर रहे थे।

समाज में महिलाओं की स्थिति भी अच्छी नहीं थी और उन्हें शूद्रों के समान समझा जाता था। इस स्थिति को देखते हुए गुरु नानक देव जी ने कहा कि स्त्री ही राजाओं और महान व्यक्तियों को जन्म देती है तथा वही मानव जीवन की आधारशिला है। उन्होंने स्त्री और पुरुष को गृहस्थ जीवन रूपी रथ के दो पहियों के समान बताया, जिनके बिना जीवन की गाड़ी आगे नहीं बढ़ सकती। गुरु जी ने स्त्री और पुरुष दोनों को समान दर्जा दिया तथा महिलाओं के प्रति होने वाले भेदभाव और घृणा को समाप्त करने का प्रयास किया।

उस समय भारत में मुख्यतः दो धर्म – इस्लाम और हिंदू धर्म – प्रचलित थे। चूँकि शासकों का धर्म इस्लाम था, इसलिए उसका प्रभाव अधिक था। सरकारी अधिकारियों तथा मौलवियों-मुल्लाओं ने विभिन्न उपायों से इस्लाम के प्रचार-प्रसार का प्रयास किया। दूसरी ओर, हिंदू समाज में व्याप्त जातिवाद और ऊँच-नीच की भावना ने भी इस्लाम के प्रसार को बढ़ावा दिया।

गुरुओं ने गुरबाणी के माध्यम से सरल भाषा और सहज शैली में लोगों को सादगी, भक्ति, परिश्रम, सेवा, बाँटकर खाने तथा जाति, पंथ, लिंग और धर्म से ऊपर उठकर मानवता का जीवन जीने की शिक्षा दी।

नारी संबंधी विचार

गुरु नानक देव जी ने *राग आसा* में स्त्रियों के सम्मान और महत्त्व को ध्यान में रखते हुए ये पंक्तियाँ कही हैं –

भंडि जंमीऐ भंडि निंमीऐ भंडि मंगणु वीआहु ।।
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु ।।
भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवै बंधानु ।।
सो किउ मंदा आखीऐ जितु जम्महि राजान ।।

(वार आसा महला 1, पृष्ठ 473)

भावार्थ :

स्त्री से ही मनुष्य का जन्म होता है, उसी से संबंध और विवाह होते हैं। उसी के माध्यम से मित्रता और परिवार का विस्तार होता है। जब एक स्त्री का निधन होता है, तो दूसरी स्त्री की खोज की जाती है। ऐसे में उसे बुरा कैसे कहा जा सकता है, जिसके गर्भ से राजा तक जन्म लेते हैं।

अर्थ

गुरु जी ने स्त्री की महत्ता का गुणगान करते हुए उसकी तुलना सृजनकर्ता (ईश्वर) से की है, क्योंकि वही संतान को जन्म देती है और प्रकृति की भाँति उसका पालन-पोषण करती है। वह पुरुष के जीवन में माता, बहन, पत्नी और पुत्री जैसे अनेक महत्वपूर्ण रूप निभाती है। स्त्री के बिना सृष्टि की रचना अधूरी है। गुरु जी यह भी प्रश्न उठाते हैं कि जब स्त्री जीवन का आधार है, तो पुरुष उसके प्रति हीन भावना या भेदभावपूर्ण दृष्टिकोण क्यों रखता है।

शकुन-अपशकुन

सगुनु अपसगुनु तिस कउ लागहि जिसु चिति न आवै ।।
(आसा - 5, पदा - 18, पृष्ठ - 401)

भावार्थ :

गुरु साहिब के अनुसार शकुन और अपशकुन जैसी धारणाएँ केवल उन लोगों को प्रभावित करती हैं, जो परमात्मा का स्मरण नहीं करते। जो व्यक्ति ईश्वर में विश्वास रखता है, वह इन अंधविश्वासों से ऊपर उठ जाता है।

श्राद्ध

जीवत पितर न मानै कोइ, मुए सिराद कराही ।।
पितर भी बपुरे कहु किउ पावहि कऊआ कूकर खाही ।।
(रागी बैरागण, कबीर, पदा - 45, पृष्ठ - 332)

भावार्थ :

कबीर जी कहते हैं कि जीवित अवस्था में माता-पिता की सेवा और सम्मान नहीं किया जाता, लेकिन मृत्यु के बाद श्राद्ध कर्म किए जाते हैं। श्राद्ध में कौओं और पशुओं को भोजन कराया जाता है। यदि वास्तव में पुण्य प्राप्त करना है, तो माता-पिता की जीवित अवस्था में सेवा करनी चाहिए, ताकि उनका आशीर्वाद प्राप्त हो सके।

सूतक

जेकरि सूतक मन्नीऐ सभ को सूतक होइ ।।
गोहे अते लकड़ी अंदरि कीड़ा होइ ।।
(वार आसा, 1 (18), पृष्ठ - 473)

भावार्थ :

यदि जन्म या मृत्यु से उत्पन्न अशुद्धि (सूतक) को सत्य माना जाए, तो संसार की प्रत्येक वस्तु अशुद्ध मानी जाएगी, क्योंकि गोबर और लकड़ी जैसी वस्तुओं में भी जीव-जंतु पाए जाते हैं। गुरु जी ने इस विचार के माध्यम से बाहरी शुद्ध-अशुद्ध की धारणाओं और अंधविश्वासों का खंडन किया है।